International Journal of Multidisciplinary Education and Research
ISSN: 2455-4588; Impact Factor: RJIF 5.12
www.multieducationjournal.com
Volume 1; Issue 4; June 2016; Page No. 51-55

रीवा जिले के जवा विकासखण्ड में भूक्षरण का पर्यावरणीय प्रभाव

डॉ. शर्मिला देवी कोल

शासकीय टी.आर.एस. महाविद्यालय, रीवा (म.प्र.)

सारांष

भूमि एक अति महत्वपूर्ण प्राकृतिक संसाधन है, पृथ्वी पर पाये जाने वाले समस्त प्रकार के जीवधारी भूमि पर निर्भर है। इस प्राकृतिक संसाधन को पर्यावरण का प्रमुख भौतिक संघटक माना गया है। किन्तु मानव द्वारा भूमि का बेरहमी से शोषण किया जा रहा है, जिसका प्रतिकूल प्रभाव सम्पूर्ण पर्यावरण पर पड़ रहा है। भूमि के अंधाधुन्ध एवं अनियोजित उपयोग के कारण अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ उत्पन्न हुई है। इन पर्यावरणीय समस्याओं को बढ़ाने में प्राकृतिक कारणों की तुलना में मानवीय क्रियाकलापों की सक्रिय भूमिका है। विभिन्न प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं में से भूक्षरण जनित समस्या अधिक विकट रूप धारण कर चुकी है।

शब्द कुंजी : रीवा जिला, जवा विकासखण्ड, भूक्षरण, पर्यावरण, प्रभाव

प्रस्तावना

भू–क्षरण एक विश्वव्यापी समस्या है। कुछ प्रदेशों में जलवृष्टि तो कुछ प्रदेशों में वायु, हिमानी, भूमिगत जल एवं सागरीय जल के क्रियाओं के कारण भू–क्षरण सम्पादित होता है। भारत में भू–क्षरण की समस्या का सबसे बड़ा श्रोत वर्षा से प्राप्त प्रवाही जल है। वर्ष 2006 के शासकीय प्रतिवेदन के अनुसार 268362 हेक्टेयर क्षेत्र भू–क्षरण द्वारा प्रभावित है। जो देश के कुल क्षेत्रफल का 7.8 प्रतिशत भाग है। कुछ भाग तो भू–क्षरण के कारण बीहड़ के रूप में परिवर्तित हो गये हैं। अध्ययन क्षेत्र इन पर्यावरणीय प्रभाव, समस्याएँ एवं परिस्थितियों से भिन्न नहीं है। अपनी विशिष्ट जलवायु जनित विशेषताओं के कारण इस भू–भाग में चादरवत् एवं नालीदार दोनों प्रकार से भू–क्षरण होता है। जवा–विकास खण्ड अपने भौतिक संरचनात्मक उच्चावचीय एवं जलवायु जनित विशेषताओं के कारण लगभग 22.5 प्रतिशत भू–भाग बीहड़ के रूप में परिवर्तित हो चुके हैं। भू–क्षरण का प्रभाव पर्यावरण पर विशेष रूप से देखने को मिल रहा है। जिसके परिणामस्वरूप जहाँ उपजाऊ मृदा अपरदित होकर क्षेत्र से बाहर प्रवाहित हो जाती है, वहीं उसका प्रभाव अधोभौगोलिक एवं सतही जल संसाधन की कुल उपलब्धता, वानस्पतिक सघनता, धरातलीय विषमता एवं इनसे सम्बन्धित आर्थिक क्रियाएँ, पशुपालन, कृषि आदि पर सीधा प्रभाव पड़ता है। जिससे आर्थिक विकास प्रभावित होकर समग्र विकास को प्रभावित कर देता है। जबकि आये दिन प्राकृतिक आपदाओं (बाढ़, सूखा, भूस्खलन) आदि की बारम्बारता में अभिवृद्धि होती है। रीवा जिले के जवा विकास खण्ड में लगभग 63 ग्रामों के 54 हजार व्यक्ति प्रत्यक्ष रूप से भू–क्षरण जनित समस्याओं से ग्रसित हैं। भू–क्षरण एक भौतिक प्रक्रिया होते हुए विभिन्न प्रकार से मानव के लिए हानिकारक सिद्ध हुई है, जिसके फलस्वरूप मानव के सामाजिक, आर्थिक क्रियाएँ, सांस्कृतिक, राजनैतिक, स्वास्थ्य एवं समस्त प्रकार के क्रिया कलापों को प्रभावित करते हुए अनेक प्रकार की पर्यावरणीय समस्याओं के उद्भव के श्रोत का कार्य करती है। साथ ही भू–क्षरण की तीव्रता धरातल के ऊपरी भाग में स्थित मृदा संस्तरों जो जीवों के विकास हेतु भोजन की आपूर्ति करता है। वे अपरदित होकर क्षेत्र की सफल पोषण क्षमता को अस्त–व्यस्त कर देते हैं। इस परिवर्तनशील क्रिया का प्रभाव अन्य भौतिक एवं धरातलीय तत्वों के साथ–साथ जैविक तत्वों पर पड़ता है, जिसका परिणाम जैव विविधता में ह्रास तथा क्षेत्र के जैव भार में कमी होना है। साथ ही इसका प्रत्यक्ष एवं परोक्ष रूप से प्रभाव मानव जीवन पर पड़ता है।

भूक्षरण एक ऐसी प्राकृतिक आपदा है, जो उपजाऊ भूमि को बाँझ बना देती है, जब धरातल की मिट्टी किसी भी साधन से स्थानान्तरित कर दी जाती है, तो उसे भूक्षरण कहा जाता है। [1] भू–क्षरण से प्रभावित धरातल अपना स्वाभाविक गुण खो देता है। जिससे उसकी उत्पादन क्षमता घट जाती है तथा पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण में अहम मृदा की अहम भूमिका रहती है। क्योंकि इसी में वनस्पतियाँ जन्म लेती है तथा एक स्वच्छ एवं स्वस्थ पर्यावरण का विकास होता है। मृदा मूल–भूत चट्टानों के चूर्ण एवं नष्ट होने तथा जीव जन्तुओं के अवशेष एवं घास–वनस्पति के नष्ट होने से बनती है। मृदा में निहित खनिज लवण जीवाँश और जल पौधों को भोजन प्रदान करते हैं, जिसके फलस्वरूप मृदा की गुणवत्ता, इसकी रचना, निर्माण प्रक्रिया और पोषक तत्वों पर आधारित होती है। पाँच सेन्ठी मीटर मोटी परत मिट्टी को पूर्णतः विकसित होने में 500 वर्ष लग जाते हैं। जबकि उसके क्षरण में केवल पाँच घंटा समय लगता है। अतः इस बहुमूल्य प्राकृतिक उपादान का संयमित उपयोग और संरक्षण जीवन क्रम को सतत बनाये रखने के लिए अति आवश्यक है। मृदा क्षरण से पारिस्थितिकी तंत्र में एवं पर्यावरण के विकास में व्यवधान उत्पन्न होता है, क्योंकि भू–क्षरण से धरातल जैसी पृथ्वी की महत्वपूर्ण परत वनस्पति विहीन हो जाती है। जिससे जैव जीवन अस्त–व्यस्त हो जाता है। भूमि को बंजर बनाने में सबसे बड़ा प्रभाव भू–क्षरण का होता है, क्योंकि इस प्राकृतिक घटना से निपटने के लिए साधन का अभाव है।

शोध विधि

प्रस्तुत शोध पत्र प्राथमिक एवं द्वितीयक आंकड़ों के प्रयोग द्वारा विश्लेषणात्मक विधि के उपयोग द्वारा पूर्ण किया गया है। द्वितीयक आंकड़े रीवा जिला, जवा विकासखण्ड एवं प्रदूषण विभाग से प्राप्त किये गये है, जबकि प्राथमिक आंकड़ों को क्षेत्रीय सर्वेक्षण में नमूना चयन विधि द्वारा किये गये साक्षात्कार एवं अनुभवात्मक विधि द्वारा संग्रहण किये गये है।

अध्ययन क्षेत्र का परिचय

भारत के हृदय (प्रदेश) स्थल मध्य प्रदेश के उत्तरी–पूर्वी भाग में स्थित रीवा– जिला प्रशासकीय दृष्टि से (दस) तहसीलों एवं नौ (9)

विकास खण्डों में विभाजित है, जिनमें सिरमौर, हुजूर, मऊगंज, हनुमना, गुढ़, रायपुर कर्चुलियान, त्योंथर, मनगवाँ, सेमरिया एवं जवा तहसील मुख्य हैं। रीवा जिले के उत्तराँचल में स्थित तहसील त्योंथर के पश्चिमी भाग में स्थित जवा विकास खण्ड वर्तमान में जिले की एक तहसील के रूप में अस्तित्व में है। डॉ. रामलोचन सिंह के अनुसार भारत के प्रादेशिक विभाजन योजना में अध्ययन क्षेत्र जवा विकास खण्ड गंगा के मैदान एवं विंध्यन का उत्तरी–पूर्वी कगार जिसे तराई अंचल के नाम से सम्बोधित किया गया है। [2]

स्थिति, सीमा एवं विस्तार

अध्ययन क्षेत्र विकास खण्ड–जवा की भौगोलिक स्थिति अथवा अक्षाँशीय विस्तार $24^0$52′ उत्तरी अक्षांश से $25^0$10′ उत्तरी अक्षांश तक तथा $81^0$13′ पूर्वी देशान्तर से $81^0$38′ पूर्वी देशान्तर पर स्थित है। [3] अध्ययन क्षेत्र की प्राकृतिक सीमा का निर्धारण उत्तर–पूर्व में गंगा का कछारी मैदान तथा दक्षिण में रीवाँ पठार एवं विन्ध्यन पर्वतीय एवं पठारी कगार करते हैं। राजनैतिक सीमा की दृष्टि से इस क्षेत्र के उत्तर–पश्चिम में उत्तर–प्रदेश जिला इलाहाबाद एवं बाँदा जिला (उ.प्र.) पूर्व में विधानसभा क्षेत्र/विकास खण्ड/तहसील त्योंथर, दक्षिण में विधान सभा क्षेत्र/तहसील सिरमौर, दक्षिण–पश्चिम में नव गठित विधान सभा क्षेत्र/तहसील सेमरिया एवं दक्षिण पूर्व में जनपद पंचायत क्षेत्र गंगेव, जवा विकास खण्ड की राजनैतिक सीमा का निर्धारण करते हैं।

यह क्षेत्र पूर्णरूपेण सामान्य वर्ग बाहुल्य की श्रेणी में आता है। [4] फलतः मध्यप्रदेश के सामान्य वर्ग बाहुल्य जिले में रीवाँ जिले का मुख्य स्थान है, प्रदेश के अधिकांश जिलों मे से अध्ययन क्षेत्र के गृह जिला में सर्वाधिक जनसंख्या का प्रतिशत सामान्य (सवर्ण) वर्ग के लोगों का है। जवा विकास खण्ड में कुल ग्रामों की संख्या 267 (दो सौ सतसठ) है, जिनमें 236 आबाद, 31 गैर आबाद (बीरान) एवं कुल 87 (सतासी) ग्राम पंचायतें शामिल हैं। प्रशासनिक इकाई की दृष्टि से कुल 41 (इक्तालीस) पटवारी हल्के एवं डभौरा, गढ़ी, त्योंथर और जवा (चार) राजस्व निरीक्षक मण्डल मुख्य हैं।

भू आकृति पर प्रभाव

भूमि का पर्यावरण और पारिस्थितिकी तंत्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। क्योंकि इसी में समस्त प्रकार की वनस्पतियाँ जन्म लेकर फूलती फलती एवं विकसित होती हैं। साथ ही सभी जीवधारियों के लिए उदर पूर्ति (भोजन) का साधन बनती हैं। भूमि की सबसे ऊपरी परत मृदा का निर्माण मूल–भूत चट्टानों के टूटने–फूटने, नष्ट होने, घास वनस्पतियाँ एवं जीव–जन्तुओं के अवशेष से बनती हैं। मृदा में निहित खनिज लवण, जीवांश और जल पौधों को भोजन प्रदान करते हैं। मिट्टी की उत्पत्ति एवं निर्माण प्रक्रिया और गुणवत्ता पोषक तत्वों पर आधारित होती है। अतः विभिन्न कारणों से मृदा अपरदन अथवा भू–क्षरण धरातल की ऊपरी परत को प्रभावित करता है। भू–आकृति एवं धरातल के ऊपरी भाग को प्रभावित करने में प्रवाहित जल की अहम भूमिका रहती है। जलीय अपरदन प्रवाहित जल से होता है। वर्षा का जल जब बिना रोक–टोंक द्रुत गति से बहता है तो भूमि की ऊपी परत की मिट्टी भू–क्षरण क्रिया के द्वारा एक स्थान से बहकर/कटकर निकल जाती है। जब छोटी–छोटी नदियाँ एवं नालों के द्वारा एक विस्तृत भू–क्षेत्र का कटाव नालिकाओं से होता है, तो वह भूमि बीहड़ एवं बंजर भूमि का स्वरूप धारण कर लेती है। अध्ययन क्षेत्र विकास खण्ड जवा की भौतिक स्थिति में यह पाया गया है कि इस क्षेत्र की लगभग सभी छोटी–बड़ी नदियाँ एवं नाले पहाड़ी, पठारी एवं उच्च पथरीली भूमि से निकल कर अध्ययन क्षेत्र में द्रुत गति से प्रवाहित होते हैं। अधिकांश नदियाँ जल प्रपात का निर्माण करती हैं। रीवा जिले की तीन बड़ी एवं सबसे प्रमुख नदियाँ जल प्रपात बनाने के बाद जवा विकास खण्ड में प्रवाहित होती है। इन नदियों में क्रमशः प्रथम टोन्स नदी (पुर्वा जल प्रपात), द्वितीय बीहर नदी (चचाई जल प्रपात) तथा तीसरी नदी महाना (क्योंटी जल प्रपात) जो जल प्रपात में अपना पानी छोड़ने के बाद विंध्यन कगार से गुजरती हुयी क्षेत्र के मैदानी भाग में भू–क्षरण के द्वारा भूमि की आकृति को प्रभावित करती है। क्षेत्र की उपजाऊ मिट्टी का द्रुत गति से क्षरण होता है। कभी–कभी अगस्त या सितम्बर के प्रथम अथवा द्वितीय सप्ताह तक इन नदियों में भयंकर बाढ़ आती है। ऐसे समय में भू–क्षरण की बारम्बारता अधिक हो जाती है। भू–क्षरण जैसी प्राकृतिक आपदा से यहाँ के कृषकों को बहुत हानि होती है। अभी पिछले दशक 3 सितम्बर 1997 एवं 10 सितम्बर 2003 को इन नदियों में आयी भयंकर बाढ़ से क्षेत्र की सम्पूर्ण पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण प्रभावित हुआ है। बाढ़ के बाद यहाँ के किसानों की फसल के नष्ट होने एवं मकानों में हुई छति से काफी जन–धन की हानि होती है। कभी–कभी नदियों के किनारे बन्धे हुए मवेशी (पशु) गाय, भैंस, बैल आदि नदी के बहाव में मौत के घाट उतर जाते हैं। सड़ी हुई किसानों की फसल एवं जीव जन्तुओं एवं पशु–पक्षियों की मौत से सम्पूर्ण पारिस्थितिकी एवं पर्यावरण प्रभावित होता है। वर्षा ऋतु में टोन्स और महाना नदी में जल स्तर (बाढ़ क्षेत्र) 75 से 100 फिट ऊँचाई तक पहुँच जाता है। नदी के जल स्तर में व्यापक वृद्धि होने से जल प्रवाह द्रुत गति से होता है तथा नदी की धारा में परिवर्तन होने से भू–क्षरण भूमि का कटाव तेजी से होता है। कहीं–कहीं पर भू–क्षरण इतना तीव्र होता है कि धरातल की 5 से 10 फिट मृदा कटकर स्थान से निकल जाती है। टोन्स नदी के तटवर्ती ग्राम जैसे– रौली, भड़रा, पटेहरा, कसियारी, पुरौना, गोहटा, जोन्हा, गाढ़ा, नगवाँ, सितलहा, भुनगाँव, विझवार, चाँदी, अकौरी आदि ग्राम बाढ़ के समय भू–क्षरण से प्रभावित होते हैं। साथ ही महाना नदी के किनारे स्थित गाँव जैसे – लूक, भनिगवाँ, गुलरिहा, जनकहाई आदि गाँव में बाढ़ आने पर भू–क्षरण का प्रभाव बहुत अधिक है। यहाँ पर धरातल की 5 से 10 फिट तक मिट्टी स्थान से भू–क्षरण क्रिया द्वारा परिवहित हो जाती है। भू–क्षरण की इस प्राकृतिक घटना का प्रभाव अध्ययन क्षेत्र की भू–आकृति पर पड़ता है। भू–आकृति के प्रभाव के साथ इस घटना का प्रभाव यहाँ के पर्यावरण पर देखा गया है।

वनस्पति पर प्रभाव

वनस्पति पर मुख्य रूप से जलवायु का प्रत्यक्ष/परोक्ष प्रभाव पड़ता है। [5] पेड़–पौधे पर्यावरण के ऐसे तत्व हैं जो पर्यावरण को कई रूपों में प्रभावित करते हैं। पेड़–पौधों के समूह को वनस्पति के नाम से पुकारा जाता है। वनस्पतियाँ पर्यावरण से नाइट्रोजन, कार्बनडाइ आक्साइड, आक्सीजन, विविध प्रकार के खनिज लवण, जल, प्रकाश आदि का शोषण करती हैं। इसके अतिरिक्त उच्चावच, मिट्टियाँ, जल प्रवाह जैसे प्राकृतिक पर्यावरण के तत्वों का भी इन पर प्रभाव पड़ता है। जलवायु वनस्पति के प्रकार एवं मात्रा को नियंत्रित करती हैं तथा अन्य कारक इनके किसी भी प्रदेश में संगठन को प्रभावित करते हैं।

अतः किसी क्षेत्र के पर्यावरणीय परिस्थिति के निर्माण में भौगोलिक स्थिति की भी महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। यह एक अदृश्य तत्व है जो परोक्ष रूप से प्राकृतिक आवास को प्रभावित करता है। जब किसी आन्तरिक स्थिति के श्रेय स्थलीय प्रभाव के कारण भिन्न पर्यावरणीय स्वरूप प्रगट करता है, तो वह पारिस्थितिकी का प्रतीक है। भू–क्षरण पर्यावरण और पारिस्थितिकी को प्रभावित करने वाले वत्वों में महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं। पृथ्वी के धरातल को ढकने वाली इस सतह पर ही जैव जीवन आधारित है। मिट्टियाँ अपने मूल शैलों के क्षरण, विघटन तथा जलवायु एवं वनस्पति की प्रक्रिया से अस्तित्व में आती है। पर्यावरण के तत्वों में मृदा का आधारी स्थान

है। इसी प्रकार बिना वनस्पति एवं पशु जगत के अस्तित्व की कल्पना नहीं की जा सकती। मानव भी कृषि कार्य मिट्टियों के माध्यम से ही करता है। मृदा मनुष्य के भोजन के अलावा अनेक कच्चे पदार्थ प्रदान करती है। इसी प्रकार मिट्टियाँ कृषि, पशुचारण एवं उद्योग जैसी आधार भूत आर्थिक क्रियाओं को संभव बनाती हैं। इस प्रकार एक बड़ी जनसंख्या मृदा पर आधारित होती है। मिट्टियों का चयन, उसका संरक्षण एवं उपयोग मनुष्य एवं मिट्टियों के सामंजस्य को सफल अथवा असफल बनाता है। वनस्पति के विनाश से अथवा वनस्पति विहीन धरातल पर कटाव, भू–क्षरण अधिक होता है। वन अधिक पशुचारण, पशुओं की चराई से घास एवं छोटी–छोटी जन्म लेती हुई वनस्पति खत्म हो जाती है। तथा पशुओं के खुर से मिट्टी ढीली होकर भू–क्षरण द्वारा अलग हो जाती है। तथा नदियों में धारा परिवर्तन नदी तल में तलछट जमाव के बढ़ने से वनस्पति भू–क्षरण द्वारा नष्ट हो जाती है। जल के द्रुत गति से प्रवाहित होने से नदी नालों के प्रवाह को मानवीय उपयोग हेतु वाधित किया जा रहा है। जिससे जल निकासी में बाधा उत्पन्न होती है। जिसके फलस्वरूप अनियंत्रित वर्षा के जल से भू–क्षरण तीव्र गति से होता है। भू–क्षरण से अनेक समस्या अध्ययन क्षेत्र में जन्म लेती है। जिसके कारण यहाँ सम्पूर्ण जीव जन्तु एवं मानव जीवन प्रभावित होता है। मिट्टी के बह जाने से ढालू भूमि में चट्टाने नग्न हो जाती हैं। अतः अध्ययन क्षेत्र के ऐसी भूमि बंजर, बीहड़ एवं ऊसर के रूप में वनस्पति बिहीन पड़ी रहती हैं। उपजाऊ भूमि का क्षरण उसे शक्ति हीन बना देता है। जिससे फल वाले पेड़ पौधे का उत्पादन नहीं हो पाता है। भू–क्षरण से नदी तल में तीव्र उठाव होता है। जिससे बाढ़ की आशंका बढ़ जाती है।

पशुओं पर प्रभाव

भू–क्षरण का पर्यावरणीय प्रभाव पशुओं पर प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। पशु पारिस्थैतिकी और अपने प्राकृतिक पर्यावरण का महत्वपूर्ण घटक है। प्राचीन काल से मानव अपनी आवश्यकता को पूरा करने में पशुओं का सहारा लिया है। पशु–मानव समायोजन का अति महत्वपूर्ण स्थान है। मनुष्य उपयोगी एवं अहिंसक पशुओं को बोझा ढोने, खेत जोतने, सवारी गाड़ी चलाने आदि के काम में लगाता है। पशुओं से दूध, मक्खन, घी, माँश, चमड़ा, सींग आदि प्राप्त करता है। अध्ययन क्षेत्र में भू–क्षरण से पशु आहार, हरी घास, वनस्पति आदि की दिनों दिन कमी हो रही है। क्षेत्र में भू–रचना धरातलीय ढाल कुछ ऐसा है कि भूमि ऊबड़–खाबड़ एवं पहाड़ी क्षेत्रों में तीव्र ढाल का वितरण पाया जाता है। रीवा जिले की सम्पूर्ण छोटी–बड़ी नदियाँ जवा विकास खण्ड से होकर गुजरती है। इन नदियों में वर्षा ऋतु में भयंकर बाढ़ आने से भूमि के ऊपरी भाग में उगी हुई हरी घास या चारा, प्राकृतिक वनस्पति डूब कर नष्ट हो जाती है। जिसके कारण पशु को चराने–खिलाने के लिए उचित आहार की कमी हो जाती है। अध्ययन क्षेत्र में वर्षा के मौसम में सभी कृषक अपने मवेसियों को खेत में बाँधते हैं, अचानक अतिवृष्टि से कभी–कभी नदियों एवं नालों में बाढ़ आ जाती है। तो बाढ़ के समय अधिकांश मवेशी (पशु) पानी में डूब कर मौत के घाट उतर जाते हैं। जिससे क्षेत्र का सम्पूर्ण पर्यावरण प्रदूषित हो जाता है। जानवरों और वनस्पतियों के सड़ने से क्षेत्र में गन्दगी फैलती है, जिसका प्रभाव पर्यावरण पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ता है। इस प्रदूषण का शिकार केवल पशु नहीं अपितु मानव सहित क्षेत्र का सम्पूर्ण जैव मण्डल होता है। पशु संसाधन की दृष्टि से अध्ययन क्षेत्र सम्पन्न है। सम्पूर्ण रीवा जिले भर विकास खण्ड जवा पशुसंसाधन में अग्रणी है। यहाँ पर पशु के अन्तर्गत आने वाले मवेशी जैसे गाय, भैंस, बैल, बकरी आदि की नस्ल उच्च कोटि की है। जिले के अन्य क्षेत्र की अपेक्षा यहाँ दुग्ध उत्पादन, घी उत्पादन एवं खोवा के उत्पादन सबसे अधिक है। व्यक्तिगत अध्ययन एवं अवलोकन पद्धति से प्राप्त सूचना के आधार पर अध्ययन क्षेत्र से लगभग 5000 (पांच हजार) लीटर दूध प्रति दिन रीवा शहरी क्षेत्र में बेंचा जाता है, साथ ही जिले में एक मात्र खोवा की मण्डी डभौरा में जहाँ रीवा के शहरी क्षेत्र के लिए खोवा की 75 प्रतिशत पूर्ति की जाती है। इसका एक मुख्य कारण जिले की लगभग सभी नदियाँ नाले इस क्षेत्र से होकर गुजरते हैं। इन नदियों की वजह से क्षेत्र में पानी का संकट नहीं रहता। यहाँ के जलासयों, प्राकृतिक, कृत्रिम जल श्रोतों में वर्ष भर जल स्तर का सन्तुलन बना रहता है।

कृषि पर प्रभाव

इस क्षेत्र में भू–क्षरण का पर्यावरणीय प्रभाव कृषि एवं फसलों पर पड़ता है।[6] पर्यावरण के ह्रास में कृषि विस्तार ने जहाँ धरातल की वनस्पति और फसल को साफ करने के लिए उत्साहित किया है, वहीं गहन कृषि में भूमि की उर्वरा शक्ति को समाप्त कर दिया तथा खेतों को बंजर एवं ऊसर बना दिया। भूमि का उपयोग यदि उसकी क्षमता के अनुसार किया जाए तो वह अपने ढंग से अपना संरक्षरण और सम्वर्धन करती रहती है। इसके लिए मृदा को आवाश्यकता के अनुसार उर्वरक और पोषण दिया जाता है। किन्तु बढ़ती आवश्यकता के कारण अधिकाअधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए अधिक मात्रा में रसायनिक खाद का उपयोग मिट्टी की उर्वना शक्ति को नष्ट कर देता है। उसी प्रकार इस क्षेत्र में भू–क्षरण के द्वारा कृषि उत्पादन कम हो रहा है, जिसका प्रत्यक्ष प्रभाव यहाँ के पर्यावरण पर पड़ रहा है।

स्वस्थ मिट्टी स्वच्छ पर्यावरण का सन्तुलन बनाती है। प्रदूषित मिट्टी अनेक रूपों में पर्यावरण को प्रदूषित करती है। कृषि का विकास स्वस्थ मिट्टी की पहचान है। कृषि भूमि की पहचान अच्छी फसल से लगाया जाता है। लेकिन अच्छी फसल के लिए मिट्टी पर कृत्रिम साधनों जैसे – रासायनिक उर्वरक, सिंचाई कीटनाशक दवा आदि से असहनी दबाव डाला जाता है, जिसके फलस्वरूप मिट्टी की स्वाभाविक सम्बधन प्रक्रिया नष्ट हो जाती है। इसके साथ ही भू–क्षरण से मिट्टी की गुणवत्ता दिनो–दिन घट रही है। इस क्षेत्र की ढालों भूमि पर भू–क्षरण की बारम्बारता सर्वाधिक है, जिसके कारण महत्वपूर्ण एवं उपजाऊ भूमि बेकार हो रही है। साथ ही पर्यावरणीय प्रभाव स्पष्ट रूप से कृषि पर पड़ रहा है, जिसके कारण कई प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं, अध्ययन क्षेत्र में टोन्स नदी एवं इसकी सहायक नदियों के किनारे स्थित गाँव जैसे –कसियारी, रौली, भड़रा, पटहट, चाँद, रुपौली, पटेहरा, पुरौना, जोन्हा, गाढ़ा नगवाँ, सितलहा, लूक, भनिगवां, जनकहाई आदि गाँव प्रमुख हैं। वर्षा ऋतु में बाढ़ के समय टोन्स और महाना नदी का जल स्तर बढ़ जाता है। इस भयंकर बाढ़ से तीव्र गति से भू–क्षरण एवं बाढ़ से फसल नष्ट होकर सम्पूर्ण पर्यावरण प्रभावित होता है। व्यक्तिगत अध्ययन के दौरान यह पाया गया कि विकास खण्ड जवा में भू–क्षरण का पर्यावरणीय प्रभाव कृषि पर देखने को मिल रहा है।

सामाजिक सांस्कृतिक प्रभाव

प्रस्तुत शोध में व्यक्तिगत अध्ययन एवं सर्वेक्षण के दौरान ज्ञात हुआ कि जवा विकास खण्ड में भू–क्षरण का सीधा प्रभाव यहाँ के सम्पूर्ण पर्यावरण पर पड़ा है। साथ ही इस आपदा का प्रभाव क्षेत्र के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर पड़ा है। क्षेत्र में भू–क्षरण का प्रभाव कृषित भूमि का घटता हुआ क्षेत्रफल, बढ़ती आबादी के भरण–पोषण हेतु खाद्यान्न की कमी, सकल पोषण क्षमता का अभाव तथा भूमि पर जनसंख्या का दबाव दिनों दिन बढ़ रहा है। सम्पूर्ण क्षेत्र का सामाजिक–सांस्कृतिक विकास अवरुद्ध है, अधिक उत्पादन के लिए भूमि का इतना अधिकतम उपयोग किया जाने लगा है,

समाज आधुनिकता के आवेश में कृत्रिम साधनों से उत्पादन के लिए बाध्य किया जा रहा है। मानव के तकनीकी विकास के अहंकार का प्रभाव प्रगट होने लगा है, जिसके कारण सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं। मानव समाज का सम्बन्ध पर्यावरण से दिनों–दिन विगड़ रहा है। यह एक समाज में बड़ी विडम्बना है कि मानव और प्रकृति के बीच में सम्बन्ध खराब हो रहे हैं। जिसका दुष्परिणाम मानवता के लिए प्रश्न चिन्ह बन गये हैं। मानव समाज की विभिन्न अनुक्रियाएँ जैसे भोजन, वस्त्र, मकान, परिवहन, कृषि, पशुपालन आदि का प्रभाव पर्यावरण पर प्रत्यक्ष रूप से पड़ा है। भू–क्षरण का प्रभाव सम्पूर्ण अध्ययन क्षेत्र के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर दृष्टिगोचर हैं। अध्ययन के दौरान पाया गया कि विकास खण्ड में सर्वाधिक भू–क्षरण प्रमाणित गाँव जैसे–कोनी, गडेहरा, चाँद, रुपौली, लूक, भनिगवाँ, जनकहाई आदि टोन्स एवं महाना नदी के तटवर्ती गाँवों में सामाजिक सांस्कृतिक प्रमाण अधिक हैं। इन ग्रामों में भू–क्षरण की आवृत्ति सर्वाधिक देखी गई है। जिसका प्रमुख कारण अन्धाधुन्ध भूमि उपयोग, धरातलीय संरचना, पधुचारण, कृषि यंत्रों का प्रयोग, रसायनिक उर्बरकों का प्रयोग आदि प्रमुख हैं। उदाहरण के लिए टोन्स नदी एवं सहायक नदी के तटवर्ती क्षेत्र में मृदा क्षरण की औसत वार्षिक दर 55.7 घन मीटर प्रति हेक्टेयर अध्ययन के दौरान ज्ञात हुई है। साथ ही एक अध्ययन के अनुसार जवा विकास खण्ड में अवनालिका अपरदन द्वारा 2.35 मिलियन घन मीटर मिट्टियों का क्षरण प्रतिवर्ष होता है तथा अध्ययन से पता चला है कि टोन्स नदी के तटवर्ती ग्रामों में अवनालिकाओं का शीर्षवर्ती विस्तार 4 से 5 मीटर प्रतिवर्ष है तथा रिल एवं रैवाइन अपरदन द्वारा प्रतिवर्ष 2.35 मिलियन घन मीटर कृषि भूमि का क्षय हो रहा है। अतः उपरोक्त अध्ययन से स्पष्ट हुआ है कि अध्ययन क्षेत्र की प्रमुख नदी टोन्स में भू–क्षरण की बारम्बारता में दिनों दिन वृद्धि हो रही है जिसका प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रभाव विकास खण्ड के सामाजिक एवं सांस्कृतिक जीवन पर पड़ा है।

पर्यावरणीय समस्याएँ – आर्थिक समस्याएँ

मानव सहित समस्त जीवधारी परिस्थैतिकी असन्तुलन एवं पर्यावरणीय समस्याओं के कारण विनास की राह पर चल रहे हैं। इन समस्याओं की जड़ में मानव प्रगति के नाम पर की गई प्राकृतिक अवमानना है। आज मानव समाज इस बात पर गर्व करता है कि जो आर्थिक प्रगति तीन–चार हजार वर्षों में मानव न कर सका वह प्रगति के बल तीन सौ वर्षों में कर दिया गया है। विचारणीय है कि आर्थिक, सामाजिक प्रगति के नाम पर किया गया तीव्र विकास किस सीमा तक अपनी सार्थकता सिद्ध करने में सफल है। सर्व ज्ञात है कि तीव्र आर्थिक विकास का आधार तकनीकी विकास और वैज्ञानिक अनुसंधान जनित औद्योगिक प्रगति, तीव्र गति से जनसंख्या वृद्धि, कृषि एवं पशुपालन का विकास, प्राकृतिक संसाधनों का दोहन है। भौतिक सुख पर आधारित उच्च जीवन स्तर आधुनिकता का प्रतीक बन गया है। प्रगति की दौड़ में मनुष्य यह भूल गया है कि पर्यावरण भी उसके जीवन का अभिन्न अंग है। अनियंत्रित संसाधन दोहन, के नाम पर किया गया प्रदूषण, हरित क्रान्ति एवं तेजी से बढ़ती जनसंख्या के कारण ऐसी पर्यावरणीय समस्याएँ प्रगट होने लगी हैं, जिनका निदान ढूढ़ना मानव समाज के लिए अनिवार्य होता जा रहा है। यह सर्व विदित है कि आर्थिक प्रगति में ऊर्जा की महत्वपूर्ण भूमिका रही है किन्तु संसाधनों के अनियोजित एवं अविवेकपूर्ण दोहन से सम्पूर्ण पर्यावरण दूषित हो गया है। जिससे मानव सहित अन्य जीवों के लिए संकट की स्थिति प्रगट होने लगी है। अतः मानवीय क्रियाकलापों का पर्यावरण एवं पारिस्थैतिकी के सन्दर्भ में विश्लेषण आज की आवश्यकता बन गई है। एवं आज संसाधनों के विदोहन जितना आवश्य है, उतना ही उससे होने वाली हानि का निराकरण भी उतना ही जरूरी है। इसके साथ ही यह भी देखना जरूरी है कि इसका पर्यावरण पर क्या कुप्रभाव पड़ सकता है। इसी तरह अगर पेड़ काटना जरूरी है तो वृक्षा रोपण भी उतना जरूरी है। अगर फसल उत्पादन के लिए रसायनिक खाद आवश्यक है तो उससे होने वाली हानि का निराकरण भी आवश्यक है। इस प्रकार आर्थिक विकास के साथ अनेक पर्यावरणीय समस्याएँ प्रश्न चिन्ह बनती जा रही हैं, जिनकी ओर ध्यान देना आवश्यक हो गया है। अतः मानवीय अनुक्रियाओं का मूल्यांकन पर्यावरण के सन्दर्भ में किया जाना आज की आवश्यकता है। क्योंकि मानव द्वारा की गई असावधानियों का भयंकर रूप सांस्कृतिक, आर्थिक विकृतियों के रूप में प्रगट होने लगा है। अतः पर्यावरणीय प्रभाव एवं समस्याएँ आर्थिक क्रियाकलाप से जुड़ी है।

आधुनिक आर्थिक एवं सामाजिक विकास की शुरूआत उन्नीसवीं सदी के मध्य से प्रारम्भ है, जब वस्तु निर्माण में यंत्रों और ऊर्जा के साधनों का प्रचुर मात्रा में उपयोग प्रारम्भ हुआ। आधिक उत्पादन के लिए कृषि के क्षेत्र में दिन प्रतिदिन नये उपकरणों का प्रयोग शोध एंव तकनीकी सुधार के द्वारा आर्थिक प्रगति का नया अध्याय शुरू हुआ। किन्तु भूमि में अधिक उत्पादन प्राप्त करने के लिए कृत्रिम खाद, जल एवं जुताई की जो पद्धति विकास के नाम पर प्रयुक्त हुई उसने मृदा, जल, एवं जल तथा हवा के द्वारा भू–क्षरण पर्यावरण को विघटन की ओर ढकेल दिया। हरित क्रान्ति से अधिक अन्न प्राप्त किया गया लेकिन मृदा की गुणवत्ता में घुन लग गया। क्योंकि इसका उपयोग निर्दयता पूर्वक किया गया। अधिक उत्पादन के लिए अधिकाधिक रसायनिक खाद, उन्नत बीज, सिंचाई, कीटनाशक दवाएँ तथा अन्य तकनीकी उपायों को बेरहमी से प्रयोग किया गया, जिसके कारण क्षेत्र की उपजाऊ भूमि बंजर एवं बीहड़ में परिवर्तित हो गई।

कृषि उत्पादन में लागत खर्च दिनोंदिन बढ़ गया है कि सूखे और नये कर बाढ़ से होने वाली क्षति यहाँ के किसान की कमर तोड़ देती है। कृषि मजदूरों की मजदूरी देना किसान के लिए कठिन हो रहा है। क्योंकि जिस गति से पर्यावरण का सन्तुलन एवं लागत खर्च दिनोंदिन बढ़ रहा है, उस गति से किसानों की आर्थिक स्थिति में सुधार नहीं आ रहा है। फसल रक्षा के नाम पर कीटनाशकों का प्रयोग भयंकर प्रभाव डाल रहा है, डी.डी.टी का प्रयोग प्रतिबन्धित कर दिया गया है। कीटनाशक दवाएँ पौधों के माध्यम से जीवों के शरीर में पहुंच रही हैं। किन्तु प्रश्न यह उठता है कि बढ़ती जनसंख्या के भरण–पोषण के लिए किस प्रकार कृषि उत्पादन बढ़ाया जाय, कृषि वैज्ञानिकों का विचार है कि बिना कीट नाशक, कम रासायनिक उर्वरक के प्रयोग से भी उचित सिंचाई व्यवस्था आदि से पर्यावरणीय समस्याओं पर नियंत्रण, अनुकूल कृषि उत्पादन में वृद्धि की जा सकती है। इस प्रकार आर्थिक समस्याओं के निराकरण हेतु भूक्षरण में नियंत्रण, कृषि सुधार, पर्यावरणीय अनुकूलता के परिप्रेक्ष्य में ही योजनाबद्ध किया जाना चाहिए। एक सुविधा के लिए अनेंक पर्यावरणीय समस्याओं का जन्म देना हानिकारक अथवा विनाशकारी प्रमाणित हो सकता है। अतः

भू-क्षरण के प्रभाव से निम्न लिखित आर्थिक समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं, जो इस प्रकार हैं

1. कृषित भूमि का क्षेत्र दिनोंदिन घटता जा रहा है, जिसके कारण इस क्षेत्र में भूमि पर जनसंख्या का दबाव बढ़ रहा है।
2. भू–क्षरण के कारण भूमि बीहड़ एवं बंजर के रूप में परिवर्तित हो रही है।
3. भू–क्षरण के प्रभाव से भूमि की उर्वराशक्ति समाप्त हो रही है। प्रति हेक्टेयर कृषि उत्पादन घट रहा है, जिस कारण क्षेत्र में भोजन आपूर्ति अथवा खाद्यान्न की समस्या उत्पन्न हुई हैं।

4. भू–क्षरण से नदियों की बाढ़ आपदा में वृद्धि हुई है। बाढ़ की तबाही का प्रभाव इस क्षेत्र में टोन्स और उसकी सहायक नदियों के तटवर्ती भाग में स्थित गाँवों पर पड़ता है, इन गावों में मुख्य रूप से कसियारी, कोनी, जनकहाई, नीबा, भनिगवां, लूक, जोन्हा, करौह, नगवां, सितलहा, पटेहरा, पुरौना, गाढ़ा आदि गावों की खरीफ फसल नष्ट हो जाती है।
5. भूमि क्षरण के प्रभाव से अनेक बहुल्य पादप प्रजातियाँ समाप्त हो रही हैं, जो मानव के जीवन में औषधि के रूप में प्रयुक्त होती रही हैं।

निष्कर्ष

भू–क्षरण के द्वारा मानव ही नहीं अपितु समस्त जीवधारी प्रभावित होते हैं। इस क्षेत्र की मृदा अपरदित होकर सम्पूर्ण विकास खण्ड की सकल पोषण क्षमता को अस्त–व्यस्त करती है। साथ ही इस परिवर्तन का प्रभाव भौतिक तत्वों के साथ–साथ जैविक तत्वों पर पड़ता है। जिसका परिणाम जैव विविधता पर पड़ता है। इसके कारण जैव विविधता का ह्रास तथा अध्ययन क्षेत्र के जैव भार में कमी होना है, जिसका प्रभाव मानव पर पड़ता है। मृदा क्षरण मिट्टी को अनुत्पादक बना देती है। अध्ययन क्षेत्र में लगभग हजारों हेक्टेयर भूमि क्षरण से बेकार हो जाती है। कुछ क्षेत्रों में ग्रीष्म काल में वायु के द्वारा भू–क्षरण होता है। ग्रीष्म काल में पशुओं एवं मवेसियों की छूट प्रथा से जानवरों के नुकीले खुर से उपजाऊ मिट्टी धूल के कण अथवा पावडर के रूप में बदल जाती है, जिससे तेज लू एवं भयंकर आँधी, तूफान से भू–क्षरण की बारम्बारता अधिक हो जाती है। कभी–कभी भयंकर तूफान से फलदार एवं धरेलू उपयोग के महत्वपूर्ण पेंड़ पौधे नष्ट हो जाते हैं। अतः अध्ययन क्षेत्र के लगभग 63 ग्रामों के 54 हजार लोग प्रत्यक्ष रूप से भू–क्षरण जनित समस्याओं से ग्रस्त हैं। पानी की सुविधा के कारण यहाँ पशुओं का पालन सुविधा जनक है। अन्य विकास खण्डों की अपेक्षाकृत जवा विकास खण्ड में पशुओं की नस्ल एवं उत्तम स्वास्थ के गायें, भैंसें पायी जाती है। किन्तु व्यक्तिगत अध्ययन और अवलोकन के दौरान पाया गया है कि टोन्स नदी और महाना नदी के तटवर्ती ग्रामों में पशु की नस्ल सर्वाधिक उच्च कोटि की है तथा इसी क्षेत्र में दुग्ध, घी, खोवा का उत्पादन भी प्रचुर मात्रा में होता है।

सदर्भ

1. वी.के. श्रीवास्तव, बी.पी. राव, पर्यावरण और परिस्थितिकी, बसुन्धरा प्रकाशन, संस्करण 1990, पृष्ठ 280.
2. बघेलवंश वर्णन रूपणि शर्मा, स्लोक क्रमांक 66.
3. ए.एच. निजामी, 1499, पृष्ठ 57.
4. जिला सांख्यिकीय कार्यालय, रीवा, विकासखण्ड–जवा, तहसील त्योंथर, वर्ष 1991–2001, पृष्ठ 1–2.
5. बी.के. श्रीवास्तव एवं पी.वी. राव, पर्यावरण और पारिस्थितिकी द्वितीय संस्करण, 1991, पृष्ठ 48.
6. वी.के. श्रीवास्तव एवं वी.पी. राव, पर्यावरण और पारिस्थैतिकी, द्वितीय संस्करण, 1990, पृष्ठ 230.